काल-विभाजन और नामकरण

हिन्दी-साहित्य के इतिहास-ग्रन्थों में काल-विभाजन के लिये प्राय: चार पद्धतियों का अवलम्ब लिया गया है। पहली पद्धति के अनुसार, सम्पूर्ण इतिहास का विभाजन चार काल खण्डों में किया गया है:

आदिकाल
भक्तिकाल
रीतिकाल
आधुनिककाल

आचार्य शुक्ल द्वारा और उनके अनुसरण पर नागरीप्रचारिणी सभा के इतिहास में, इसी को ग्रहण किया गया है। दूसरे क्रम के अनुसार केवल तीन युगों की कल्पना ही विवेकसम्मत है:

आदिकाल
मध्यकाल
आधुनिककाल

भारतीय हिन्दी परिषद के इतिहास में इसे ही स्वीकार किया गया है और डा० गणपतिचन्द्र गुप्त ने अपने वैज्ञानिक इतिहास में इसी का अनुमोदन किया है। इसके पीछे तर्क यह है कि मध्यकालीन साहित्य की चेतना प्राय: एक है: उन्नीसवीं सदी के मध्य में या उसके आगे-पीछे उसमें कोई ऐसा मौलिक परिवर्तन नहीं हुआ जिसके आधार पर युग-परिवर्तन की मान्यता सिद्ध की जा सके।संत-काव्य, प्रेमाख्यान काव्य, रामकाव्य, कृष्णकाव्य, वीरकाव्य, नीतिकाव्य, रीतिकाव्य आदि की धाराएँ पूरे मध्यकाल में पाँच शताब्दियों तक अखण्ड रूप से प्रवाहित होती रहीं, उनमें मौलिक परिवर्तन नहीं हुआ। तीसरी पद्धति साहित्य का विभाजन विधा-क्रम से करती है। इसका आधार यह है कि समस्त साहित्य-राशि का एकत्र अध्ययन करने की अपेक्षा कविता तथा गद्य-साहित्य की विविध विधाओं के इतिहास का वर्गीकृत अध्ययन साहित्य-शास्त्र के अधिक अनुकूल है। इनके अतिरिक्त एक पद्धति और है जो शुद्ध कालक्रम के अनुसार वस्तुगत विभाजन को ही अधिक यथार्थ मानती है। इसके प्रवक्ताओं का तर्क है कि किसी विचारधारा अथवा साहित्यिक दृष्टिकोण का आरोपण करने से परिदृष्य विकृत हो जाता है और यथार्थ-दर्शन में बाधा पड़ती है
- अत: स्वाभाविक कालक्रम के अनुसार ही सामग्री का विभाजन करना समीचीन है।